P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-2* (Part-1) October- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

अस्ती की पुरासम्पदा

शिवांगी राव
सहायक प्रोफेसर,
प्राचीन इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग,
इविंग क्रिश्चियन कॉलेज,
प्रयागराज

सारांश

अस्ती नामक पुरास्थल के सर्वेक्षण से जो पुरावशेष बिखरे हुए दिखायी दिये, उनके अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि कुषाणकाल में यह पुरास्थल महत्वपूर्ण केन्द्र के रूप में विकसित हो चुका था। कुषाणकालीन ईटे यत्र–तत्र दिखायी देती है। यहॉ पेड़ के नीचे विष्णु की प्रतिमा मिली। यह कला के सन्दर्भ में नवीन उद्भावनाओं से परिपूर्ण है। यह प्रतिमा इलाहाबाद संग्रहालय में रखी उस प्रतिमा के समान है जो झूँसी और ऊँचाडीह से मिली है। इसका समय चतुर्थ शताब्दी ईस्वी स्वीकार किया गया है। इस प्रतिमा में आयुधों में मानवीकरण दिखाया गया है। कालिदास ने सर्वप्रथम विष्णु के आयुधों में मानवीय रूप का उल्लेख हुआ है। यह कालीदास के वर्णन के पूर्व ही विद्यमान था।

मुख्य शब्द : अस्ती, इलाहाबाद संग्रहालय, पुरावशेष।

प्रस्तावना

अस्ती नामक स्थल फतेहपुर शहर मुख्यालय से संलग्न दक्षिण पश्चिम दिशा में स्थित है। सम्प्रति सम्पूर्ण टीले पर घनी आबादी बसी हुई है। अस्ती का टीला लगभग बीस हेक्टेयर में विस्तृत है। टीले पर घनी बस्ती के कारण सम्यक् रूपेण अन्वेषण एवं सर्वेक्षण करना अत्यन्त दुष्कर कार्य था। यहां के प्राचीनतम् मृदाभावशेष अनवत प्रकार के उत्तरी काले चमकीले मृद्भाण्ड हैं, यद्यपि उनकी संख्या अत्यन्त न्यून है। इससे यह सम्भावना की जा सकती है कि यह स्थल दूसरी–प्रथम शदी ई0पू0 में किसी समय आबाद हुआ होगा। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि गंगा घाटी में अनेक ऐसे पुरास्थल हैं जो मौर्य काल में आवासित हुए। उदाहणार्थ फतेहपुर में लदगवां, अया[1] तथा इलाहाबाद जिले में स्थित महनैया डीह[2] मौर्यकाल में जनसंख्या में पर्याप्त वृद्धि और विकसित व्यापार ने ऐसे स्थलों को आबाद होने में महती भूमिका निर्मित की।

कुषाण काल में अस्ती एक महत्वपूर्ण केन्द्र के रूप में विकसित हो चुका था। कुषाण कालीन ईटें आस्ती ग्राम के विभिन्न घरों की दीवालों एवं नालियों के निर्माण में यंत्र–तंत्र सर्वत्र दिखायी पड़ती है। अधिकांश ईटें तैतालीस से0मी0 लम्बी तथा पैतीस से0मी0 (43X35) चौड़ी है। इस ग्राम के उत्तरी उपान्त पर सरकारी योजना के अन्तर्गत तालाब की खुदाई हो रही थी तो कुषाणकालीन ईटों से निर्मित संरचना के अवशेष प्राप्त हुए। चतुर्दिक कुषाणकालीन ईटों की दीवालों से परिवेष्टित एक संरचना अभी भी उस स्थल पर देखी जा सकती है।

इस ग्राम में अनेक भग्न मूर्तियों के अवशेष बिखरे पड़े हैं परन्तु वे पूर्णतया भग्न है। दो मूर्तियां जो सुरक्षित अवस्था में नीम के पेड़ के नीचे रखी हुई है, अत्यन्त महत्वपूर्ण है। विष्णु की एक प्रतिमा जो लगभग सत्तर से0मी0 ऊँची है, कला के संदर्भ में नवीन उद्भावनाओं से परिपूर्ण है। विष्णु स्थानक मुद्रा में प्रदर्शित किये गये हैं। चतुर्भुजी विष्णु के दाहिने ऊर्ध्व हस्त में कोई फल[3] तथा दक्षिण अधःहस्त गदा आयुध के ऊपर रखा है। आयुधों के मानवीयकरण के कारण गदा को स्त्रीरूप में दिखाया गया है।[4] वाम ऊर्ध्वहस्त में शंख का अंकन किया गया है[5] और अधः वामहस्त चक्रपुरूष के ऊपर रखा है। इस प्रतिमा का प्रभामण्डल पूर्णतया अनलंकृत है।[6] वनमाला भी छोटे रूप में घुटनों के ऊपर तक ही प्रदर्शित हैं[7] इस प्रतिमा का सर्वांग सादृश्य ऊँचडीह तथा झूंसी से प्राप्त उस विष्णु प्रतिमाओं से है जो सम्प्रति इलाहाबाद संग्रहालय में रखी हुई है। इसका समय चतुर्थ शदी ईस्वी स्वीकार किया गया है। उल्लेखनीय है कि विष्णु के आयुधों के मानवीय रूप का उल्लेख सर्वप्रथम कालिदास ने किया है।[8]

गुप्तं ददृशुरात्मान सर्वास्वप्नेषु वामनैः।
गदाशर्ङ्ग चक्रलांछित मूर्तिभिः ।।

ऐसा प्रतीत होता है कि विष्णु के आयुधों के मानवीयकरण का आधार सम्भवतः कालिदास के वर्णन के पूर्व ही किसी न किसी रूप में विद्यमान था क्योंकि प्रारम्भिक गुप्तकाल तक मूर्तियों में विष्णु के हाथों में कमल के दिखाने

की परम्परा नहीं थी। जबकि कालिदास ने विष्णु के हाथ में कमल का उल्लेख किया है। विष्णु के हाथ में फल दिखाने की परम्परा भी मनोवेधक है। यह परम्परा सर्वप्रथम प्रयाग परिक्षेत्र में ही प्रारम्भ हुई। मत्स्यपुराण में शक्तिचित्र फलोदग्रंशंखचक्र गदाधाम के रूप में विचित्र फल का उल्लेख किया गया है। यह विचित्रफल संभवतः बिल्व रहा होगा। श्री सूक्त में लक्ष्मी को बिल्व वृक्ष कहा गया है।[9]

'विष्णु' शब्द वैदिक साहित्य में मिलता है। पौराणिक साहित्य में उसे एक प्रमुख ब्राह्मणधर्मीच देवता के रूप में प्रयुक्त किया गया है। विष्णु या वासुदेव नाम से पहचाने जाते थे, जैसे बलदेव में बलदेविक, वासुदेव को का उल्लेख करने वाली बाईस देवताओं की यह सूची पालि–सुत्रनिपात की 'निद्देस टीका' में मिलती है।[10] मिलिन्दपन्नह में भी वासुदेव के उपासको का उल्लेख मिलता है।[11]

प्राचीन भारत के विविध सम्प्रदायों में भागवत, पांचरात्र तथा सात्वत मुख्य रूप से विष्णु के उपासक थे। मथुरा में भगवान वासुदेव की पूजा होती थी। प्राचीन अभिलेखों में वासुदेव के कुछ मन्दिरों के साक्ष्य मिलते है। धोसुण्डी (प्राचीन माध्यमिका राजस्थान) की नारायणवाटिका।[12]

विदिशा का विष्णु मन्दिर जहाँ यवनराजदूत हेलियोदोरस ने गरूड़ध्वज की स्थापना की थी।[13]

मथुरा में मोड़ (More) नामक स्थान पर बना पचवीरो का शैलदेवग्ह।[14]

मथुरा का वसु द्वारा बनवाया गया महास्थान।[15]

विष्णु मन्दिर के अस्तित्व के ये साक्ष्य से स्पष्ट होता है कि विष्णु प्रतिमा की प्राचीनता बहुत विस्तृत है। ईस्वी सन् के प्रारम्भ के पूर्व की विष्णु प्रतिमाए नहीं मिलती केवल संकर्षण या बलराम की तीन मूर्तिया मिली है। विष्णु मूर्ति कुषाण काल से मिलती है।

प्रारम्भिक काल से कुषाणकाल तक की सोने, चांदी, तांबे की मुद्राओं पर शिव, सूर्य, कार्तिकेय, लक्ष्मी आदि देवताओं का अंकन मिलता है। लेकिन विष्णु की अंकन कम मिलता है। पांचालो के एक शासक विष्णु मित्र के सिक्को पर वासुदेव विष्णु के दर्शन होते है, डॉ० दिनेश चन्द्र सरकार के अनुसार हुविष्क की एक ताम्रमुद्रा पर विष्णु का अंकन मिलता है। लेकिन यह मत मान्य नहीं है। कुषाण काल की दूसरी मुहर पर विष्णु की सुन्दर मूर्ति अंकित है।[16] यहाँ आयुधो की स्थिति भिन्न है।

कुषाण काल की 36 विष्णु प्रतिमाए मथुरा से मिली है। इसके अतिरिक्त इस काल की 4, 3 लखनऊ, इलाहाबाद संग्रहालय में हैं। मध्य प्रदेश से भी दो मूर्तियां मिली है।[17]

इसके अतिरिक्त इस काल की मिट्टी की मूर्तिया, राजस्थान की प्रतिमाएं आदि का भी अध्ययन किया गया है।[18]

मथुरा की विष्णु प्रतिमाओं में निम्न विशेषताएं थी।

सभी मूर्तिया आकार में छोटी है उनकी ऊंचाई लगभग 2.5 फीट से 15 फीट की हैं। सबसे बड़ी मूर्ति 3 फीट की चक्रव्यूह विष्णु की हैं।

अधिकांश मूर्तियां चतुर्भज है। दाहिना हाथ अभयमुद्रा है। बाकी हाथों में गदा चक्र शखं या जलपात्र है। कुषाणकाल की विष्णु–मूर्तियों में प्रभामण्डल नहीं मिलता हैं। विष्णु की दाहिनी हथेली खुली रहती है, लेकिन बुद्ध प्रतिमाओं की समान उस पर चक्र, त्रिरत्न आदि मांगलिक चिन्हों के दर्शन नहीं होते।[19]

मूर्ति में हाथ की रेखाएं का प्रादुभाव होता है जो बाद में गुप्तकाल की विशेषतांए बन जाती है। कुषाण काल में उभयवर्ती (दोनो ओर से गढ़ी हुई) मूर्तियों का निर्माण होने लगा था। जिनमें पीछे की ओर, शरीर, केश वस्त्र बनाया जाता था। या फल और पक्षियों से लदे किसी वृक्ष का अंकन होता है। इन मूर्तियों के अतिरिक्त पटिया पर गहराई से उभरी हुई मूर्तियां भी बनायी जाती थी। इस काल की सभी मूर्तियां ऊपर उठे हुए हाथ वाली है।

इन मूर्तियो के गदा और चक्र दो प्रमुख आयुद्ध है'। ये दो हाथ वाली मूर्तियों के अतिरिक्त सभी विष्णु मूर्तियों में रहते हैं। शंख विष्णु का तीसरा आयुद्ध है लेकिन कुछ प्रतिमाओं में जलपात्र भी मिलता है।

विष्णु की सभी प्रतिमाओं में पीछे उठा हुआ दाहिने हाथ में गदा होता है। इसके लिए केवल एक ही अपवाद है। हुविष्क की मुहर पर बनी विष्णु मूर्ति, जिसमें साधारण दाहिने हाथ में गदा है।[20]

विष्णु के ऊपर उठे हुए बायें हाथ में चक्र रहता है उसकी परिधि अंगूठे के सहारे से खुली हुई हथेली पर टिका रहता है। शेष चार उगलियां सामने की ओर झाँकती हुई उसे पकड़ती है। चक्र की तिलियों की संख्या निश्चित नहीं है।

सहित्यिक साक्ष्यों के आधार पर पर, विष्णु का शंख से सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। शंख विष्णु के बायें हाथ में रहता है। शंख हाथ में विभिन्न स्थितियों में रहते है।

इस प्रकार, साहित्य और कला दोनों से सपष्ट होता है कि शंख, चक्र गदा के साथ–चक्र या कमल को भी आयुद्ध के रूप में मानने की परम्परा गुप्त काल के अन्त तक मान्य नहीं थी।

सभी विष्णु मूर्तियों अधोवस्त्र या धोती धारण किए गए पाये गये हैं। साहित्यिक परम्परा के आधार पर इसे पीताम्बर कहा जाता है जिसे कांछ लगाकर पहना जाता था। पीछे की ओर कांछ इस तरह खोसी जाती थी कि उसका छोर फेंट के बाहर झांकता रहे। सामने की ओर दूसरे छोर को समेट कर खोसा जाता था। जो पैरो के बीच लहराता रहता था। धोती पहनने की यह पद्धति कुषाण कालीन मूर्तियों में सामान्य रूप से पायी जाती है।

विष्णु मूर्तियों में एक ही प्रकार की उत्तरीय का प्रयोग किया गया। उत्तरीय कमर में बटी हुई मोटी रस्सी की तरह बंधा रहता है तथा बाई ओर उसके दोनों छोर एक बड़ी सी गांठ बनाते हुए उसी पैर के पास लटकता रहता है।

कमरबन्ध प्राचीन भारतीय वेशभूषा का एक अंग थी। कुषाण कालीन मूर्तियो में इसका उपयोग सर्वसाधारण है। यह कमर में बंधी चौड़ी पट्टी होती है जिसके दोनों छोर गांठ बनाने के बाद नाभि के नीचे दाहिनी जांघ पर

लटकते रहते है। कुषाण के बाद गुप्तकाल में इस पट्टी की चौड़ाई घटने लगती है और यह डोरी का रूप धारण कर लेती है।

कुषाण काल की पांच विष्णु मूर्तियों में ही यज्ञोपवीत पहने हुए मिली है। आगे चल कर 'मुक्तायज्ञोपवीत्र' के रूप में यह एक अलंकरण बन जाता है।

कुषाण कालीन भारतीय राजपुरूषों के मस्तकों पर पगड़ी या उष्णीष दिखलाई पड़ता है, जिसमें बादाम के आकार की फुल्ले से सुशोभित बड़ी सी कलगी लगी रहती है। अपितु सुन्दर दिखने के लिए झालर भी लगाई जाती थी। कुषाण कालीन अधिकांश मूर्तियों में इसी के दर्शन होते है। थोड़ा परिवर्तन के साथ बाद के काल में भी इस प्रकार की पगड़ी दिखाई पड़ती है।

उत्तर कुषाण काल में उष्णीष के स्थान पर ऊंचे उठे हुए बिना कलगी के मुकुट के दर्शन होने लगते है। कुषाण–गुप्तकाल की कुछ प्रतिमाओं में मुकुट के एक नवीन अंग का उदय होता है। मस्तक के पीछे मुकुट को बांधने वाली डोरी मिलने लगती है।

वनमाला का विषणु से अटूट सम्बन्ध है। उसी के कारण विष्णु का एक नाम वनमालिन भी है। हरिवंश[21] के अनुसार वनमाला में अर्जुन, नीप, कन्दल, और कदम्ब के पुष्प होते थे।

एक दूसरी परम्परा वनमाला का निर्माण तुलसी, कुन्द मन्दाल कमल और पारिजातक से मानती है। कभी–कभी वनमाला घुटनों तक लटकने वाली उस माला को समझा जाता है। जिसमें कदम्ब के स्तबक या गुच्छे हो तथा जो सभी ऋतुओं के उज्जवल पुष्पो से गूंथी गई हो।[22] कुषाण कालीन कई विष्णु मूर्तियों में फूल पत्ती तथा कलियों से बनी हुई वनमाला दिखलाई पड़ती है। इसमें कमल और कदम्ब की पहचान सरलता से की जा सकती है। वनमाल के दूसरे प्रकार में फूल ही दिखलाई पड़ते है, केवल पदकों की भॉति पत्तियां और बड़े फूल पिरोये गये है।

वनमाला के ये दोनो प्रकार छोटे आकार में है। कुषाण काल में लम्बी वनमाला का प्रचलन नहीं था, लेकिन उस पद्धति का प्रारम्भ होने लगा था। कुषाण गुप्त काल में उसे अधिक बल मिला और गुप्तकाल में पहुंचते–पहुंचते लम्बी हो गयी।

विष्णु मूर्तियों में मुकुट के अतिरिक्त कंकण, अगंद या भुजबंद, कुण्डल और माला का प्रयोग हुआ है, इनमें मुकुट और कुण्डलो को छोड़कर शेष अलंकरण को अनिवार्य नहीं समझे जाते थे।

अस्ती से प्राप्त दूसरी महत्वपूर्ण प्रतिमा दुर्गा की है। चतुर्भुजी महिषमदिर्नी बैठी हुई प्रदर्शित है। दाहिने हाथ में शूल से महिषरूपी राक्षस को विदीर्ण कर रही है और अधः वामहस्त से उसकी पूछ को पकड़े है।[10] इसमें भी प्रभामण्डल अनलंकृत है। महिष मर्दिनी के शरीर पर भी कोई अलंकरण नहीं है। इसकी समरूप महिषमर्दिनी का एक अंकन राजकीय संग्रहालय लखनऊ में रखा है। इस अंकन में भी चतुर्भुजी महिषमदिर्नी दाहिने हाथ में शूल लिये महिष का वध करते प्रदर्शित है। इसका समय कुषाण कालीन स्वीकारा किया गया है।

इस प्रतिमाओं के अतिरिक्त अनेक भग्नावशेष गांव में विभिन्न स्थानों पर रखे हुए हैं। जो गुप्तकाल और पूर्व मध्य काल के हैं, परन्तु ये सभी इतने अधिक खण्डित हैं कि उनकी पहचान संभव नहीं। यदि ग्राम के उत्तरी उपान्त पर कुषाण कालीन संरचना के जो अवशेष अभी भी अवस्थित है, उनका सम्यक उत्खनन किया गया तो महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ सकता है।

दुर्गा पूजन प्राचीन काल से चला आ रहा है। भारत में देवी शक्ति की उपासना का प्रमाण चौथी सहस्त्राब्दी ई0 पू0 की बलूचिस्तान में प्रस्फुटित होने वाली सभ्यताओं में मिलता है। इस सन्दर्भ में कुल्ली संस्कृति से प्राप्त मिट्टी की मूर्तिया विशेष उल्लेखनीय है।

ऋग्वैदिक काल में देवी की समस्त विश्व में व्याप्त शक्ति की कल्पना का बोध हो चुका था।[24] केनोपनिषद् में उमा हेमावती का नाम मिलता है जो दुर्गा अथवा पार्वती का दूसरा नाम है। जिसके बारे में बताया गया है कि उसने देवताओं को ब्रह्य की प्राकृति से परिचित कराया[25] सर्वप्रथम तैत्तिरीय आरण्यक में दुर्गा वैरोचनी नाम मिलता है[26] गृहसूत्रो के काल तक दुर्गा के घोर और सौम्य रूप की कल्पना जन्म ले चुकी थी। इसकी पुष्टि महाभारत के दुर्गास्त्रोत से भी होती है।[27] दुर्गा के अनेक पक्षों की विस्तृत कल्पनाएं पौराणिक युग में कर ली गई थी। मारकण्डेय पुराण के देवी महात्म्य में काल्पनिक आयु के आधार पर दुर्गा के सन्ध्या, सरस्वती, चण्डिका, गौरी, महालक्ष्मी, ललिता आदि अनेक नाम प्रदान किये गये हैं।[28]

एक वर्ष की आयु वाली बालिका के रूप में उनका नाम सन्ध्या, दो वर्ष की सरस्वती, सात वर्ष की चण्डिया, आठ वर्ष की शाम्भवी, नव वर्ष की दुर्गा, दस वर्ष की गौरी, तेरह वर्ष की महालक्ष्मी तथा सोलह वर्ष की ललिता दिया गया है।[29]

आगे चलकर दुर्गा से सम्बन्धित कल्पना का पूर्ण विकास नवदुर्गा की कल्पना में हुआ है। नवदुर्गा के कौन–2 नाम है इसमें विभिन्न शास्त्रों में विभिन्नता दिखायी देती है। पुराणों तथा अपराजित पृच्छा नामक ग्रन्थों में नव दुर्गाओं का वर्णन किया गया है।

प्रतिमा शास्त्रों के आधार पर दुर्गा को अनेक रूपों में प्रदर्शित करने का विधान निश्चित किया गया है। विष्णु धर्मोत्तर पुराण[30] में दुर्गा को आठ भुजाओं वाली, सिंह पर आसीन वार्णित किया गया है। उनके हाथों में बाण, 'शूल, खड्ग, चक्र, चन्द्रबिम्ब तथा कपाल रहता है। अशुभदभेदागम[31] के अनुसार दुर्गा चार भुजावाली रहती हैं। उनके आगे का दहिना हाथ अभय मुद्रा में एवं पीछे के हाथ में चक्र रहता है। आगे के बायें हाथ में खेटम तथा पीछे के हाथ में शंख पकड़े रहती हैं। वे पद्यासन पर खड़ी हुई या महिष की पीठ पर बैठी रहती है। सुप्रभेदाम्[32] में दुर्गा को अष्ट भुजी बताया है उनके आठों भुजाओं में शंख, चक्र, धनुष, बाण, खड्ग खेटक तथा पाश रहता है।

शुगकाल में पत्थर के बने अनेक छल्लो पर देवी आकृतियां बनी है। देवी के साथ कहीं–2 सिंह का अकंन हुआ है। सम्भव है कि यहाँ दुर्गा का अकंन नही है। परन्तु देवी के साथ सिंह का प्रदर्शन सिंह वाहिनी दुर्गा का पूर्व

रूप रहा हो इस सन्दर्भ में एजेज की एक मुद्रा पर कमल पर खड़ी कमलधारिणी देवी का चित्र है, उसके निकट एक सिंह है, मुद्रा के पृष्ठ भाग पर वृषभ है। मुद्रा पर बनी इस आकृति को जीतेन्द्रनाथ बनर्जी ने दुर्गा की आकृति माना है।[33] दुर्गा की मूर्तियां कुषाणकाल से मिलने लगती है। यहाँ दुर्गा का चतुर्भुजी रूप दिखाया गया है। जिनका एक हाथ अभय मुद्रा में और दूसरा कट्यवलम्बित मुद्रा में है। शेष दो हाथो में भाला, त्रिशूल या छत्र है। कुछ मूर्तियों में देवी के साथ सिंह भी प्रदर्शित है। गुप्तकाल में सिंह पर आसीन देवी की मूर्तियों का निर्माण होने लगा था। गुप्तकाल तक दुर्गा का समीकरण शिव की पत्नी पार्वती के साथ हो चुका था।

उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य अस्ती की पुरासम्पदा का अध्ययन करना है।

निष्कर्ष

देवी को महिषासुर मर्दिनी तब कहा गया जब देवी ने महिषासुर नामक राक्षस का वध किया था। देवी महात्म्य, मत्स्यपुराण और रूपमण्डल में देवी के इस रूप को कात्यायनी कहा गया। देवी के इस रूप से सम्बद्ध अनेक कथाएं पुराणों में है। जिसमें देवी के द्वारा महिष (भैसें) के रूप में राक्षस के वध का उल्लेख है। इस स्वरूप का विस्तृत विवरण देवी महात्म्य में मिलता है। इस विवरण के अनुसार राक्षसो का नेता महिषासुर देवताओं को पराभूत कर इन्द्र, अग्नि, वायु, चन्द्रमा, यम, वरूण आदि के अधिकारो को स्वयं भोग रहा था, स्वर्ग पर उसी का अधिकार था और देवता लोग बाहर भगा दिये गये थे। पराजित देवताओं ने ब्रह्मा, विष्णु और शिव से अपनी रक्षा हेतु प्रार्थना की, जिसे सुनकर देवता क्रोधित हुए और अनके मुख से तेज निकला, ये तेज एकत्र होकर भयंकर दिखायी पड़ा और एक नारी रूप में परिणत हो गया। सभी देवता उसे अपने शस्त्र दिये और विनीत प्रार्थना की। देवताओं की प्रार्थना से द्रवित दुर्गा ने अपनी सेना सहित महिषासुर का विनाशकर स्वर्ग को ही नहीं त्रैलोक्य को भी निष्कंटक कर दिया।[34] इस कथानक का तथा देवी का महिषासुर से युद्ध का विवरण अन्य पुराणों में भी थोड़े, अन्तर के साथ प्राप्त होता है।[35] विष्णु धर्मोत्तर पुराण में देवी के इस रूप को चण्डी कहा गया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *डिस्ट्रिक गजेटियर्स आफ यूनाईटेड प्राविन्सेज, जिल्द 20 (फतेहपुर जनपद) पृष्ठ–20.*
2. *शुक्ल, बी0सी0, भारतीय कला, नये संदर्भ नये विमर्श, पृष्ठ–16, 17.*
3. *मत्स्य पुराण, अध्याय–171 श्लोक 25 तथा परमपुराण सृष्टिखण्ड अध्याय 42 श्लोक 139.*
4. *शुक्ल वी0सी0 भारतीय कला, नये संदर्भ नये विमर्श, पृष्ठ–13.*
5. *पूर्वोद्धृत।*
6. *पूर्वोद्धृत।*
7. *जोशी, नीलकण्ठ पुरूषोत्तम, प्राचीन भारतीय मूर्ति विज्ञान, पृष्ठ–82.*
8. *रघुवंश दशमसर्ग श्लोक, 60, शुक्ल बी0सी0 भारतीय कला पृष्ठ–13.*
9. *श्री सूक्त श्लोक–6, शुक्ल बी0सी0 भारतीय कला पृष्ठ–14.*
1. *अग्रवाल, वा0श0, प्राचीन भारतीय लोकधर्म, पृ0–100–101.*
2. *अग्रवाल, वा0श0, प्राचीन भारतीय लोकधर्म, पृ0–100–101.*
3. *D. HI. P-91.*
4. *Sicrar D.S., Select Inscriptions, Calcutta, 1942, Pp. 90, 91*
5. *Mathura Inscriptions, Ed. K.L. Janert, Gattingan, 1961, P. 154.*
6. *वही, P. 155.*
7. *D. HI. P-128-32.*
8. *जोशी, नी0पु0, कुषाणकालीन विष्णु प्रतिमाएं, लखनऊ, 1969, पृष्ठ–27.31.*
9. *Shastri, T.V.G., A Stone Railing from Kunidane Guntur district, Journal of the Indian Society of Oriental Art, New Series, Vol. II.*
10. *Joshi, N.P., Use of Auspicious Symbals in the Kushana Art at Mathura, Mirashi Felicitation Volume, Nagpur, 1965, P.P. 311-17.*
11. *DHI, 1956.*
12. *हरिवंश, विष्णु0, 11.8, गीता प्रेस–प्रति, पृष्ठ–243-*
13. *Apte V.3, Sanskrit English Dictionary.*
14. *अग्रवाल, वी0एस0, जर्नल आफ उत्तर प्रदेश हिस्टोरिकल सोसाइटी, XXII पृष्ठ–152.*
15. *Dixit, R.K, Proceedings of Indian Historical Cangress, Aligarh, 1960, P.83.*
16. *केनीपनिषद्, 3, 25.*
17. *त्रैत्तिरीय आरण्यक, 10, 1, 7.*
18. *महाभारत 4,66,32.*
19. *भागवतपुराण, देवी, म0 5, 17, 10.*
20. *भागवतपुराण, देवी म0 5, 21–22.*
21. *विष्णुधर्मोत्तरपुराण, 115, 17–19.*
22. *अशुमद्भेदागम् अ0 31.*
23. *सुप्रखेदागम्, अ0 19.*
24. *Banerjee, J.N. The Development of Hidu Iconography, P. 134.*
25. *देवी महात्म्य 2, 6–31.*
26. *देवी भागवत्, 5, 20 मारकण्डेयपुराण, 11, 55, मत्स्यपुराण, 152, 17, 24, ब्राह्माण्डपुराण 4,29,75, स्कन्दपुराण, प्रभास खण्ड अ0–83.*